99. वहीं पेज, 82,83
100. मजूदार, आर0सी0,' पूर्वोधृत, पेज–331
101. वैद्य, सी0वी0,' पूर्वोधृत, पेज–182
102. गॉगुली , डी0सी0,' पूर्वोधृत, पेज–171
103. पाण्डेय,ए0 पी0, पूर्वोधृत , पेज–86
104. वैद्य, सी0वी0,' पूर्वोधृत, पेज–182
105. आक्योलोजिकल सर्वे रिपोर्ट्स,भाग–21, खण्ड–1, नई दिल्ली, 2000, पेज–34
106. मित्रा, एस0 के0, पूर्वोधृत , पेज–118
107. पाण्डेय,ए0 पी0, पूर्वोधृत , पेज–95
108. मजूदार, आर0सी0,' पूर्वोधृत, पेज–331
109. तिवारी, गोरेलाल, पूर्वोधृत, पेज–55–59
110. लुआर्ड, सी0ई0, 'प्रोविन्सियल गजेटियर्स ऑफ इण्डिया', सेन्ट्रल इण्डिया एजेन्सी, खण्ड–6ए, लखनऊ,1907, पेज–20
111. जनपद गजेटियर बाँदा, इलाहाबाद,1909, पेज–162
112. पाण्डेय,ए0 पी0, पूर्वोधृत , पेज–103
113. मित्रा, एस0 के0, पूर्वोधृत , पेज–128
114. मजूदार, आर0सी0,' पूर्वोधृत, पेज–332
115. रे, एच0 सी0 , पूर्वोधृत, पेज–730
116. मित्रा, एस0 के0, पूर्वोधृत , पेज–135,136
117. रे, एच0 सी0 , पूर्वोधृत, पेज–734
118. शर्मा, आर0 के0, पूर्वोधृत , पेज–69
119. पाण्डेय,ए0 पी0, पूर्वोधृत , पेज–124

65. एपिग्राफिया इण्डिका, भाग–1, पेज–132, श्लोक–26
66. बनर्जी, आर0डी0,' हिस्ट्री ऑफ मेडिवेल इण्डिया ' ब्लेकी एण्ड सन्स, 1934, पेज–262
67. राजतंरगिणी, भाग–1, स्टीन द्वारा सम्पादित एवं अनूदित, बम्बई संस्करण, 1892, अध्याय–6, पेज–2006, श्लोक–15
68. गॉगुली , डी0सी0,' हिस्ट्री ऑफ परमार डायनेस्टी,' ढाका, 1933, पेज–40
69. एपिग्राफिया इण्डिका, भाग–1, पृष्ठ 136 ,श्लोक–23
गौड़ी क्रीडालताअसिस्तुलित खस वलः कोशलः कोशलानाम्
नश्यंत कश्मीरवीराः शिथिलित मिथिलः कालवन मालवानाम्
70. जनपद गजेटियर टीकमगढ़ पूर्वोधृत, पेज–36
71. एपिग्राफिया इण्डिका, भाग–1, पूर्वोधृत , पेज–36
72. गोपालन, आर0,' हिस्ट्री ऑफ पल्लवाज ऑफ कान्ची, मद्रास,1928, पेज–115
73. छाबड़ा, बी0सी0 सरकार , डी0सी0 , देसाई, जेड0 ए0,' एपिग्राफिकल रिसर्च' एनसिएण्ट इण्डिया, नवम्बर 1953, पुनमुद्रित 1985, पेज– 221
74. पाण्डेय,ए0 पी0, पूर्वोधृत , पेज–45
75. त्रिपाठी, ए0 पी0,पूर्वोधृत, पेज–91
76. त्रिपाठी, आभा, पूर्वोधृत, पेज–97
77. पाण्डेय,ए0 पी0, पूर्वोधृत , पेज–48,50
78. एपिग्राफिया इण्डिका, भाग–1,पूर्वोधृत, पेज–136 ,श्लोक–47
79. पाण्डेय,ए0 पी0, पूर्वोधृत , पेज–50
80. त्रिपाठी, आर0एस0,' पूर्वोधृत,, पेज–374
81. पाण्डेय,ए0 पी0, पूर्वोधृत , पेज–52
82. मित्रा, एस0 के0, पूर्वोधृत , पेज–73
83. रे, एच, सी0,' द डायनेस्टिक हिस्ट्री ऑफ नार्दर्न इण्डिया' खण्ड–2, दिल्ली, 1973, पेज–689
84. पाण्डेय,ए0 पी0, पूर्वोधृत , पेज–55
85. तबकात ए अकबरीः निजामुद्दीन अहमद,रैवर्टी का सम्पादन,लन्दन, 1981, पेज–1
86. रे, एच0 सी0 , पूर्वोधृत, पेज–690
87. वैद्य, सी0वी0,' डाउनफाल आफ हिन्दू इण्डिया' पूना, 1926 पेज–181
88. मित्रा, एस0 के0, पूर्वोधृत , पेज–88
89. वही , पेज–89
90. वही , पेज–89
91. शर्मा, आर0 के0, पूर्वोधृत , पेज–66
92. मित्रा, एस0 के0, पूर्वोधृत , पेज–92
93. पाण्डेय,ए0 पी0, पूर्वोधृत , पेज–69
94. तिवारी, गोरेलाल, पूर्वोधृत, पेज–47
95. मजूदार, आर0सी0,' पूर्वोधृत, पेज–331
96. वैद्य, सी0वी0,' पूर्वोधृत, पेज–181
97. रे, एच0 सी0 , पूर्वोधृत, पेज–701
98. पाण्डेय,ए0 पी0, पूर्वोधृत , पेज–82

34. तिवारी , गोरेलाल, पूर्वोधृत, पेज–22,23
35. वही , पेज –24
36. वही , पेज–28
37. त्रिपाठी, काशी प्रसाद, पूर्वोधृत, पेज–12
38. तिवारी, गोरेलाल, पूर्वोधृत, पेज–30
39. वही, पेज–35
40. वही, पेज–27
41. कनिंघम, ए0,' आर्क्योलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया,' टूअर इन सेन्ट्रल प्रोविन्सेज, खण्ड–9, पेज–82
42. तिवारी , गोरेलाल, पूर्वोधृत, पेज –37
43. वही , पेज–36
44. वही, पेज–37
45. त्रिपाठी, आर0एस0,' हिस्ट्री ऑफ एनसिएण्ट इंडिया दिल्ली,1942, पेज–369. टिप्पणी गोरेलाल तिवारी ने पेज–32 पर लुइस राइस संग्रहीत' मैसूर के शिलालेख नामक पुस्तक के पेज 229 का विवरण दिया हैं जिसके अनुसार कलचुरि राजा कृष्णराज की उपाधि धारण की।
46. आर्क्योलोजिकल सर्वे रिपोर्ट्स, खण्ड–2 से उद्धृत, पेज–95 चौहान शासन पृथ्वीराज तृतीय का मदनपुर अभिलेख (संवत 1239) –
    अरूण राजस्य पौत्रेण श्री सोमेश्वर सुनूना।
    जेजाक भुक्ति देशोडयं पृथ्वीराजेन लूनिता।।
47. पाण्डेय, ए0पी0,' चन्देलकालीन बुन्देलखण्ड का इतिहास,' प्रयाग, 1968, पेज–7
48. मित्रा, एस0 के0 ,' द अर्ली रूलर्स ऑफ खजुराहो,' कलकत्ता, 1958, पेज–1
49. मजूदार, आर0सी0,' एनसिएन्ट इण्डिया,' दिल्ली,196, पेज–1
50. त्रिपाठी, आर0सी0,' एज ऑफ इम्पीरियल कन्नौज,' बम्बई, 1955, पेज–82
51. शर्मा, आर0 के0, पूर्वोधृत , पेज–63
52. त्रिपाठी, आर0एस0,' एज ऑफ इम्पीरियल कन्नौज,' बम्बई, 1955, पेज–82
53. वही, पेज–82
54. शर्मा, आर0 के0, पूर्वोधृत , पेज–63
55. त्रिपाठी, आर0एस0,' एज ऑफ इम्पीरियल कन्नौज,' बम्बई, 1955, पेज–82
56. रायचौधरी, एच0 सी0 , पूर्वोधृत , पेज–523,561
57. जनपद गजेटियर, बाँदा पूर्वोधृत , पेज–35
58. तिवारी गोरेलाल, पूर्वोधृत , पेज–58
59. मित्रा, एस0 के0, पूर्वोधृत , पेज–33
60. तिवारी गोरेलाल, पूर्वोधृत , पेज–44
61. पाण्डेय,ए0 पी0, पूर्वोधृत , पेज–29
62. त्रिपाठी, आभा, 'चन्देलकालीन भूमिदान पत्रों का महत्व,' इतिहास, अंक–1, भाग–1, नई दिल्ली, 2003,पेज–97
63. पाण्डेय,ए0 पी0, पूर्वोधृत , पेज–3
64. शर्मा, आर0 के0, पूर्वोधृत , पेज–64

10. सिंह, डा. राजेन्द्र, 'बुन्देलखण्ड (उ.प्र.) में तेंदू पत्ता उत्पादन, संरक्षण एंव समस्यायें', नेशनल सेमीनार में प्रस्तुत शोधपत्र, टीकमगढ़, 1995
11. इंडियन आर्क्योलोजी : ए रिव्यू , 1958–59, पेज–72 तथा 1960–61, पेज–62
12. शुक्ला,आए.के., 'द ज्योग्राफी ऑफ रामायन' , कौशल बुक डिपो, दिल्ली , 2003, पेज–267, 274
13. वाल्मीकि रामायण, गीता प्रेस, गोरखपुर, पेज खण्ड–1 , हिन्दी अनुवाद–राम नारायण दत्त शास्त्री , सं.–2040 , पेज–267,274.
14. रायचौधरी, एच0 सी0,'पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ एनसिएण्ट इण्डिया', कलकत्ता, 1953, पेज–29
15. झाँसी गजेटियर, लखनऊ , 1965, पेज – 18
16. लाहा, विमल चरन,' हिस्टोरिकल ज्योग्रफी ऑफ एनसिएन्ट इडिया' अनुवादक– रामकृष्ण द्विवेदी, लखनऊ, 1972 , पेज–83, 218, टिप्पणी–लाहा के मत का राजेन्द्र सिंह ने अपने शोध पत्र,' फोर्ट्सः द कॉरीडोर आफ अर्बन इनवायरनमेन्ट इन बुन्देलखण्ड,' इन्टरनेशनल सेमीनार, बी0 एच0 यू0 , में पृष्ठ दो पर खण्डन किया है।
17. रायचौधरी, एच0सी0, पूवोधृत, पेज–129
18. वही, पेज–129
19. वहीं, पेज–129
20. थापर, 'रोमिला,' अशोका एण्ड डीक्लाइन ऑफ मौर्याज,' आक्सफोर्ड , 1961, पेज –13
21. शास्त्री, नीलकण्ड के0 ए0,' ए कम्प्रेहेन्सिव हिस्ट्री ऑफ इण्डिया,' खण्ड – 2 , वाराणसी, 1952, पेज– 94,95
22. शर्मा, आर0 के0 ,' मध्यप्रदेश के पुरातत्व का सन्दर्भग्रन्थ,' इलाहाबाद, 1976, पेज–13
23. शास्त्री,नीलकण्ठ, के0 ए0 , पूर्वोधृत, पेज–94, 95
24. तिवारी, गोरेलाल,' बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास,' वाराणसी,1933,पेज–11
25. कनिंघम,' आर्क्योलोजिकल सर्वे रिपोर्ट्स , खण्ड–17, पेज–113, 139
26. सिंह, दीवान प्रतिपाल,' बुन्देलखण्ड का इतिहास,' खण्ड –1, वाराणसी, सं0 1985, पेज –348
27. शर्मा, वाई0 डी0,' एक्सप्लोरेशन ऑफ सिस्टोरिकल साइट्स,' एनसिएन्ट इंडिया, नबम्वर 1953, पुनर्मुद्रित 1985, नई दिल्ली, पेज–160,161
28. काशी प्रसाद ,' बुन्देलखण्ड का वृहद इतिहास (राज तंत्र से जनतंत्र)', टीकमगढ, 1995, पेज–30
29. जनपद गजेरियर टीकमगढ़, 1995, पेज–30
30. तिवारी, गोरेलाल, पूर्वोधृत , पेज –19
31. राव, वी0डी0, गोखले, वी0 के0, डिसूजा, ए0 एल0 ,' एनसियेन्ट हिस्ट्री एण्ड कल्चर,' बम्बई, 1966,पेज–258
32. मजूमदार, आर0सी0 तथा अल्टेकर, ए0 एस0,' द वाकाटका गुप्त ऐज,' दिल्ली,1960, पेज–144
33. शर्मा, आर0 के0 , पूर्वोधृत, पेज–32

के उत्तराधिकारियों त्रैलोक्यवर्मन (1203-1250) वीरवर्मन (1250-1286), भोजवर्मन (1286-1288), हम्मीरदेव 1288-1310, ने अजयगढ़ को भी शासन का केन्द्र बनाया। त्रैलाक्यवर्मन ने सल्तनत के प्रतिनिधि से कालिंजर वापस छीना तथा 'कालिंजराधिपति' की उपाधि धारण की, परन्तु वह चन्देलों की खोयी हुयी प्रतिष्ठा को वापस लाने में असफल रहा। त्रैलोक्य वर्मन की कालिंजर विजय की पुष्टि गर्रा ताम्रपत्र तथा वीरवर्मन के अजयगढ़ अभिलेख से होती है।[113] त्रैलोक्यवर्मन ने रीवा तथा डाहल मंडल के कलचुरियों को विजित किया।[114] त्रैलोक्यवर्मन के शासनकाल में इल्तुतमिश ने कालिंजर दुर्ग पर असफल घेरा डाला। त्रैलोक्यवर्मन के उत्तराधिकरी वीरवर्मन ने कालिंजर को अपना निवास बनाये रखा। उसने मालवा से कड़ा तक अपना साम्राज्य बनाया।[115] दाही दानपत्र में उत्तर–पश्चिम में वीरवर्मन के राज्य विस्तार को नलपुर या नरवर तथा गोपगिरि या ग्वालियर तक होने का दावा किया गया है।[116] भोजवर्मन के नाम की पुष्टि अजयगढ़ दुर्ग में तरहौनी द्वारा के समीप लगे शिलालेख से होती है।[117] उसके शासन की अन्तिम ज्ञात तिथि 1342 है[118] भोजवर्मन के पश्चात चन्देल सत्ता का अन्त नहीं हुआ, परन्तु सल्तनत काल में इनका राजनैतिक योगदान नगण्य हो गया।[119]

सन्दर्भ :–

1. दुबे वी0एस0 ''इगनीयस एण्टीक्वीटीज एण्ड पीरियड्स ऑफ आरिजिनिसिस इन गोडवाना लैण्ड'' भूगोल एवं भूगर्भ खण्ड में अध्यक्षीय उद्बोधन, आई0 एस0 सी0 ए0, बम्बई,1960.
2. सक्सेना, जे0पी0,' जियोलोजिकल कन्ट्रोल आन द इवोल्यूशन ऑफ बुन्देलखण्ड टोपोग्राफी, जरनल ऑफ ज्योग्राफी यूनीवर्सिटी आफ जबलपुर , नं0 –2, नबम्बर 1960, पेज–19.
3. वाडिया,डी0ए0,' जियोलोजी ऑफ इण्डिया' , मैकमिलन , लन्दन, 1961, पेज–433.
4. सिंह , डॉ0 राजेन्द्र,'' वाटर रिसोर्स एण्ड इट्स मैनेजमेन्ट ए केस स्टडी ऑफ रीवर बेतवा'', लैण्डस्केप सिस्टम्स एण्ड इकोलोजिकल स्टडीज, वाल्यूम 13 नं0 1, जून 1990, पेज–80 से 85.
5. सिंह, पुरूषोत्तम,'' हिस्टोरिकल टैक्स ऑफ बुन्देलखण्डः यूनीक सोर्स ऑफ इकोलोजिकल बैलेंस'', इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस 65वें अधिवेशन में प्रस्तुत शोध पत्र, बरेली, 2004 पेज –1,2.
6. अली, मसूद (सम्पा0), ' ड्राईलैण्ड एग्रीकल्चर इन बुन्देलखण्ड,' टेक्नीकल बुलेटिन, आई0 जी0 एफ0 आर0 आई0, झॉसी1982,पेज–1,2.
7. ऑकडे मौसम प्रयोगशाला– इण्डियन ग्रासलैण्ड एण्ड ऑफ रिसर्च इन्स्टीट्यूट, झाँसी।
8. सिंह प्रो0 रामलोचन,' इण्डिया : ए रीजनल ज्योग्राफी' नेशनल ज्योग्रफिक सोसायटी, बी0 एच0 यू0 पाराणसी, 19971 (प्रथम संस्करण), पेज – 604
9. त्यागी , डा0 आर0 के0,' ग्रासलैण्ड एण्ड फॉडर एटलस ऑफ बुन्देलखण्ड,' आई0 जी0 एफ0 आर0 आई0,1997, पेज – 124

ISSN-2394-6326
Journal de Brahmavart

चन्देल सत्ता का उत्कर्ष– चन्देल सत्ता का उत्कर्ष पृथ्वीवर्मन के पुत्र मदनवर्मन (1129-1163 A.D.) के शासन में हुआ।[100] उसका प्रथम अभिलेख कालिंजर स्तम्भ लेख है जो V.S.1186 या 1129 A.D. का है। चन्दबरदाई के अनुसार मदनवर्मन ने गुर्जरा (गुजरात) के शासक जयसिंह सिद्धराज को परास्त किया था। मदनवर्मन द्वारा जयसिंह सिंहराज (1093-1143 A.D.) को परास्त करने के विवरण कुमारपालचरित से भी प्राप्त होते हैं।[101] मदनवर्मन ने मालवा के शासक जयवर्मन (1128-1163 A.D.) को परास्त कर 'अवन्तिनाथ' की उपाधि धारण की।[102] मदनवर्मन ने काशी तथा कन्नौज के शासक गोविन्द चन्द गहड़वाल से मित्रतापूर्ण सम्बन्ध स्थापित किये।[103] पनवाड़ी तथा अन्य स्थानों से मदनवर्मन ने महोबा में मदन सागर तालाब तथा आधुनिक ललितपुर जिले में मदनपुर नामक नगर के निर्माण का श्रेय लिया।[104] कालिंजर शिलालेख में मदनवर्मन के महाप्रतिहार सिंहनाद तथा महानचनी मद्मावती का उल्लेख है। कनिंघम के मतानुसार ये दोनों कालिंजर के नीलकंठ मन्दिर में सेवा हेतु नियुक्त थे, जिसमें पहला प्रधान द्वारपाल तथा द्वितीय प्रमुख नर्तकी थी।[105] मदनवर्मन का अल्पकालिक उत्तराधिकारी उसका पुत्र यशोवर्मन द्वितीय (1163-1165 A.D.) था।[106] परमर्दिदेव के बटेश्वर अभिलेख से उसके नाम की पुष्टि होती है।

मदनवर्मन का पौत्र परमर्दिदेव या परमाल (1165-1202 A.D.) उसका वास्तविक उत्तराधिकारी हुआ। परमर्दिदेव ने शान्तिमय वातावरण में गद्दी संभाली।[107] परमर्दिदेव के शासन का प्रथमार्द्ध शानदार रहा। उसने भिलसा को 1173 में चालुक्य सत्ता से छीन लिया।[108] परमर्दिदेव के शासन काल में चन्देल शक्ति को भरत की उदीयमान चौहान शक्ति पृथ्वीराज तृतीय का सामना करना पड़ा। सोमेश्वर के पुत्र पृथ्वीराज ने 1181 में सिरसागढ़ एवं महोबा के क्रमागत युद्धों में चन्देल शक्ति को परास्त कर चन्देलों की प्रतिष्ठा को धूमिल कर दिया। इस युद्ध में चन्देल सेना की ओर से आल्हा, ऊदल, इन्दल, मलखान इत्यादि सेनापतियों ने भाग लिया था, जिनका अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन चन्दरबरदाईकृत 'पृथ्वीराज रासो' तथा जगनिक कृत 'परमाल रासो' में मिलता है।[109] चन्देलों की प्रतिष्ठा पर सबसे बड़ी चोट मुईजुद्दीन गोरी के गुलाम कुतबुद्दीन ऐबक ने की जिसने 1202 में कालिंजर को घेर लिया।[110] हसन निजामी के अनुसार, ''सोमवार 20, रजब के दिन 1203 । दुर्ग के निवासियों ने समर्पण कर दिया। यह दुर्ग सिकन्दर की दीवार की तरह था। 50 हजार लोग गुलाम बना लिये गये तथा विपुल सम्पत्ति प्राप्त हुये। कालिंजर का दुर्गपति हजबरूद्दीन हसन अर्नल को बनाया बनाया गया।''[111] घेरे के दौरान परमर्दिदेव की मुत्यु हो गयी। परमर्दिदेव को बुन्देलखण्ड में उसके निर्माणों के लिये याद किया जाता है। परमाल ने कई तालाब, मन्दिर, बैठक, चबूतरे बनवाये। अजयगढ़ दुर्ग के परमाल ताल एवं मंदिर के निर्माण का श्रेय उसी को है। परमर्दिदेव के साथ ही चन्देलों की प्रतिष्ठा का भी अवसान हो गया।[112] परमर्दिदेव

होकर विद्याधर ने एक बड़ा कोष तथा अप्राप्त मणियां सुल्तान को प्रदान की, परन्तु निजामुद्दीन अहमद के समकालीन न होने के कारण युद्ध के विवरण संदिग्ध हैं।[86] मालवा के शासक भोज परमार तथा गांगेय देव कलचुरि विद्याधर की सत्त का सम्मान करते थे।[87] विद्याधर के पश्चात चन्देल शक्ति में क्रमशः गिरावट आयी तथा उसके उत्तराधिकारी अपने पूर्ववर्तियों की भांति योग्य नहीं रहे।

विजयपाल (1030–1050 ए0डी0) के शासन काल की पुष्टि मऊ प्रस्तर अभिलेख एवं देव वर्मन के नन्यौरा पत्र से होती है।[88] विजयपाल के शासनकाल का कोई राजनैतिक महत्व नहीं है। महोबा शिलालेख के अनुसार विजयपाल ने गांगेयदेव कलचुरि को युद्ध में परास्त किया था। जबलपुर ताम्रपत्र लेख से विजयपाल की धार्मिक प्रवृत्तियों के सन्दर्भ में सूचनायें प्राप्त होती है।[89] विजयपाल ने परमभट्टारक, महाराजाधिराज एवं परमेश्वर की उपाधियां धारण की।[90] विजयपाल का अनुज देव वर्मन (1050–1060 ए.डी.) उसका उत्तराधिकरी हुआ। उसका नन्यौरा ताम्रपत्र (1051 ए0डी0) तथा चरखारी ताम्रपत्र (1052 ए0डी0), उसकी उपाधियों की सूचना देते है।[91] कालिंजर शिलालेख देव वर्मन के शासन में लक्ष्मीकर्ण कलचुरि (1041–72 ए0डी0) से चन्देल सत्ता के संघर्ष एवं विजय की सूचना देता है।[92] परन्तु विक्रमांकदेवचरित का लेखक बिल्हण युद्ध में लक्ष्मीकर्ण की विजय का विवरण देता है।[93]

कीर्तिवर्मन, सलक्षणवर्मन तथा जयवर्मन के शासन– चन्देल सत्ता का अभिनवीकरण कीतिवर्मन (1060–1100 ए0डी0) के दीर्घशासन में हुआ। महोबा के कीरत सागर तालाब के निर्माता कीर्तिवर्मन का एक अभिलेख देवगढ़ से V.S.1054 का प्राप्त हुआ है।[94] कृष्ण मिश्र रचित प्रबोध चन्द्रोदय से कीर्तिवर्मन द्वारा चेदि नरेश लक्ष्मीकर्ण को पराजित करने की सूचना प्राप्त होती है। इस युद्ध में चन्देल सेनापति चक्रचूड़ामणि गोपाल नामक सामन्त था।[95] कीर्तिवर्मन के कालिंजर शिलालेख V.S.1047से समकालीन शासकों के काल निर्धारण में सहायता मिलती है।[96] कीर्तिवर्मन के पश्चात सलक्षणवर्मन का शासन अल्पकाल के लिये हुआ। अजयगढ़ प्रस्तर अभिलेख से सलक्षणवर्मन (1100-1115 A.D.) के योग्य मंत्रियों ने नाम पता चलते हैं।[97] सलक्षणवर्मन का उत्तराधिकारी जयवर्मन (1115-1120 A.D.) भी अल्पकालिक शासक रहा। जयवर्मन का उल्लेख सिक्कों से भी प्राप्त होता है। दार्शनिक विचारधारा वाले जयवर्मन ने धंग की भांति संगम में प्राण त्याग दिये।[98] जयवर्मन के उत्तराधिकारी पृथ्वीवर्मन (1120-1128 A.D.) का अल्पकालिक शासन राजनीतिक शून्यता वाला रहा। यद्यपि मऊ शिलालेख में उसकी तुलना पृथु से की गयी है तथापि उसके किसी साहसिक कार्य का विवरण नहीं मिलता है।[99]

मुकाबला किया परन्तु परिणाम सुल्तान के पक्ष में रहा।' बिना बाहरी सहायता के जयपाल बड़ी सेना के साथ युद्ध करने में अक्षम था। परन्तु यह भी सच है कि प्रतापी धंग के भय से ही सुबुक्तगीन ने अपने अभियानों को आगे नहीं बढ़ाया।[75] मुस्लिम इतिहासकारों ने धंग के लिये 'अमीर' शब्द का प्रयोग किया है।

धंग ने धार्मिक एवं जनकल्याणकारी कार्यो का कुशलता से सम्पादन किया। उसने चन्द्रग्रहण के अवसर ग्रामदान वाराणसी में किया, जिसकी पुष्टि नन्यौरा ताम्रपत्र करता है।[76] V.S.1011 के खजुराहो शिलालेख, V.S.1011 के खजुराहो जैन मन्दिर शिलालेख, V.S.1055 के नन्यौरा ताम्रपत्र, V.S.1058 के खजुराहो कोकल्ल के खजुराहो शिलालेख, V.S.1059 के खजुराहो के शिलालेख से धंग के जनकल्याणकारी कार्यों की पुष्टि होती है।[77] उसके शासनकाल में महिलाओं को सम्मान प्राप्त था। खजुराहों के अनेक मन्दिरों के निर्माता धंग ने प्रयाग में जलसमाधि लेकर प्राण त्यागे।[78]

गण्डदेव (1008–1019 ए0डी0) धंग का उत्तराधिकारी था जो अपने पिता के दीर्घकालिक शासन के पश्चात अधिक आयु में सिंहासनारूढ़ हुआ। इब्न उल अथर ने अपनी पुस्तक तारीख उल कामिल में गंडदेव के लिये 'नन्दा' शब्द का प्रयोग किया है। कनिंघम ने सर्वप्रथम यह सुझाव प्रस्तुत किया कि मुस्लिम इतिहासकारों ने भूलवश 'नन्दा' नाम दिया है तथा अधिकांश इतिहास कनिंघम से सहमत है।[79] गंडदेव के शासनकाल में गजनी के शासक महमूद के विरूद्ध दूसरी बार जयपाल के पुत्र अनंगपाल ही सहायता के निहितार्थ हिन्दू राज्य संघ का निर्माण हुआ।[80] उज्जैन, ग्वालियर, कन्नौज, योगिनीपुर तथा अजमेर के शासक इस संघ में शामिल हुये। युद्ध में अनंगपाल के हाथी के बिगड़ जाने से बाजी महमूद के हाथ रही। अनंगपाल के मैदान छोड़ देने के कारण महमूद ने भागती सेना का दो दिन और दो रात पीछा किया तथा 8,000 विपक्षी सैनिकों को कत्ल कर दिया।[81] संघ जिस उद्देश्य से निर्मित हुआ था, वह फलीभूत नहीं हो सका। महमूद ने दिसम्बर 1018 में कन्नौज पर आक्रमण कर वहां के शासक राज्यपाल को हरा दिया तथा कन्नौज को लूटा। गंडदेव ने राज्यपाल की भीरूता पर उसे दण्ड देने के लिये अपने पुत्र विद्याधर के नेतृत्व में सेना भेजी, जिसने कन्नौज को विजित कर राज्यपाल को मार डाला।[82] विद्याधर जो कि गंडदेव का उत्तराधिकारी बना, के विरूद्ध राज्यपाल की हत्या की प्रतिक्रिया में महमूद ने चन्देल सत्ता पर लक्ष्य निर्धारित किया। इब्न उल अथर के अनुसार हिजरी 409 में महमूद ने बिदा (विद्याधर) के क्षेत्रों पर आक्रमण किया।[83] महमूद तथा विद्याधर के मध्य युद्ध एक नदी के किनारे हुआ। इब्न उल अथर के अनुसार 'बिदा' रात्रि में मैदान छोड़कर भाग खड़ा हुआ तथा सुल्तान ने चन्देल शिविर लूट लिये।[84] महमूद इस अपूर्ण विजय से संतुष्ट नहीं था अतः हिजरी 414 या 1023 ए0डी0 में उसने विद्याधर को पुनः घेरा। इब्न उल अथर इस युद्ध के सम्बन्ध में मौन है यद्यपि हिजरी 413 में उसने महमूद द्वारा भारत के एक शक्ति सम्पन्न किले पर आक्रमण का उल्लेख किया है। डा0 रे की अवधारणा है कि यह किला कालिंजर ही है।[85] निजामुद्दीन अहमद के अनुसार महमूद के घेरे से विवश

विजय प्राप्त की।[60] साथ ही महेन्द्रपाल प्रतिहार की सहायतार्थ हर्ष ने अनेक युद्धों में भाग लिया।[61] धंगदेव के नन्यौरा ताम्रपत्र में प्रशस्तिकार ने अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन करते हुये हर्ष की वीरता की प्रशंसा की है।[62]

कालिंजर का प्रथम विजेता यशोवर्मन– चन्देल वंश की प्रथम प्रतिष्ठा यशोवर्मन ने स्थापित की जिसने क्षीण प्रतिहार शक्ति तथा गृह कलह से ग्रसित राष्ट्रकूट शक्ति के कारण अनुकूल वातावरण में एकछत्र साम्राज्य का निर्माण किया।[63] यशोवर्मन ने उत्तर में यमुना नदी तक सीमा का विस्तार किया तथा कालिंजर दुर्ग को विजित करने वाला प्रथम चन्देल शासक बना।[64] यशोवर्मन की विशाल वाहिनी का खजुराहो शिलालेख में काव्यात्मक वर्णन है।[65] यशोवर्मन ने मगध तथा उत्तरी बंगाल में निर्बल हो रही गौड़ शक्ति को परास्त किया।[66] राजतंरगिणी में प्रयुक्त 'नश्यंत कश्मीर वीराः' चन्देल शक्ति के कश्मीर के शासक शंकर वर्मा से भिड़न्त की सूचक हैं, यद्यपि इसकी अभिलेखीय पुष्टि नहीं होती है।[67] यशोवर्मन के शासन में चन्देलों ने कोशल, मिथिला, मालवा, कुरू विजय के विवरण उपलब्ध होते हैं।[68] यशोवर्मन ने कोकल्ल देव के उत्तराधिकारियों को दो बार परास्त किया। खजुराहों शिलालेख में यह विवरण लिपिबद्ध है, जिसमें चेदियों को 'निर्लज्ज' कहा गया है। डा0 हेमचन्द्र रे की अवधारणा है कि पराजित चेदि नरेश युवराज प्रथम अथवा लक्ष्मणराज था। V.S. 1011 के खजुराहो शिलालेख में यशोवर्मन (925–950 ए0डी0) की दिग्विजय के विवरण उसके एकछत्र शासन को प्रमाणित करते हैं।[69] खजुराहो के प्रसिद्ध चतुर्भुज मन्दिर का निर्माण करवाने वाले यशोवर्मन का उत्तराधिकारी धंगदेव था।[70]

प्रतापी धंग– धंगदेव (950–1008) अपने 50 वर्षो से अधिक के शासन में चन्देल शक्ति को उत्कर्ष के शिखर पर पहुंचा दिया। खजुराहो शिलालेख में निर्देश है कि कान्ची, राढ़, आन्ध्र तथा अंग देश की रानियां उसके बन्दीगृह में थी तथा कोशल, कथ, सिंहल और कुन्तल नरेश उसके आज्ञापालक थे।[71] परन्तु यह विवरण उपयुक्त प्रतीत नहीं होता है क्योंकि चोल नरेश राजराज प्रथम (885–1013) के अधिकार में कान्ची था तथा राजराज अपने समय का महान विजेता तथा सामुद्रिक शक्ति की मदद से वृहत्तर साम्राज्य का निर्माता था।[72] राजेन्द्र चोल प्रथम के तिरूवलंगाडु अभिलेख से भी इसकी पुष्टि नहीं होती। पुरातत्वविद चारों विजयों को स्वीकार नहीं करते हैं।[73]

धंग के शासनकाल की प्रमुख राजनैतिक घटना गजनी के शासक सुबुक्तगीन द्वारा उद्भाण्डपुर के शाही शासन के विरूद्ध अनेक युद्धों की थी। उतबी, इब्न उल अथर तथा निजामुद्दीन इत्यादि मुस्लिम इतिहासकार सुबुक्तगीन के विरूद्ध एक भारतीय संघ की चर्चा करते हैं, जिसमें धंग की सेना भी शामिल हुयी थी।[74] परन्तु डा0 एच0सी0रे महोबा अभिलेख के आधार पर ऐसे किसी संघ की बात नकारते हैं। जयपाल शाही जैसे छोटे शासक की विशाल सेना का विवरण एच0सी0 रे मत का समर्थन नहीं करता है। उतबी के अनुसार 'नीच काफिर (जयपाल) ने 8000 घुड़सवार, 30,000 पैदल, 300 हाथियों के साथ सुल्तान का

का तादात्म्य कारीतलाई तथा करनवेल नामक दो स्थानों से मतभेदों के साथ विद्वान स्थापित करते हैं।[44]

कलचुरि वंश की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि कालिंजर विजय रही। 'कालिंजरपुरवराधीश्वर' की उपाधि कलचुरि शासकों के पास 9वी शताब्दी तक रही। बाद में चन्देलों की शक्ति ने कालिंजर को 9वीं शताब्दी में हस्तगत कर लिया था।[45]

'बुन्देलखण्ड' की प्रथम स्वतंत्र अभिव्यक्ति 'जेजाकभुक्ति' या 'जयभुक्ति' के नाम से दुर्धर्ष चन्देलों के सत्ता काल में हुयी।[46] चन्देलों ने क्षेत्र में राजनैतिक सामाजिक तथा सांस्कृतिक वैविध्य एवं विशिष्टता प्रदान करते हुये क्षेत्र को एक इकाई के रूप में संगठित करने का कार्य किया। कभी प्रतिहार सत्ता के सामन्त रहे चन्देलों ने न केवल बुन्देलखण्ड बल्कि आसपास के क्षेत्रों में भी एकछत्र शासन स्थापित किया। डा0 विन्सेन्ट स्मिथ, प्रो0 कीलहर्न, बेगलर तथा सर एलेक्जेंडर कनिघंम ने चन्देलों के इतिहास से सम्बन्धित पुरातात्विक कार्यो तथा खोजों में उल्लेखनीय योगदान प्रस्तुत किया है, जिससे चन्देलों का स्पष्ट इतिहास प्रकाश में आ सका है।[47] चन्देलों ने अध्ययन क्षेत्र में लगभग 10वीं शताब्दी से 14वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक शासन किया। प्रतिहार साम्राज्य के टूटने के परिणाम स्वरूप मध्य एवं पश्चिमी भारत में अनेक राजवंशों का उदय हुआ था जिनमें चन्देल भी शामिल थे।[48] 36 राजपूत वंशों के समूह में शामिल चन्देलों ने स्वयं की उत्पत्ति चन्द्रवंशी चन्द्राद्रेय से मानी है।[49] चौवीं शताब्दी के प्रथम चतुर्थांश में नन्नुक ने राजवंश की स्थापना की थी। खजुराहों के समीप खजुराहोवाहक को चन्देल राजसत्ता के प्रारम्भिक राजाओं से जोड़ा जाता है और इसके पुरातात्विक प्रमाण उपलब्ध हैं[50] संभवतः नन्नुक के काल में चन्देल प्रतिहार सत्ता के सामन्त थे।[51] नन्नुक (825 से 840 ए0डी0) का उत्तराधिकारी वाक्पति था जिसने नवीं शताब्दी के द्वितीय चतुर्थांश में क्षेत्र पर शासन किया। विन्ध्य श्रृंखलाओं को वाक्पति का क्रीड़ांगन कहा गया है क्योंकि उसने इन श्रृंखलाओं में अनेक विपक्षियों ये युद्ध लड़े, जिनमें भोज प्रतिहार, देवपाल, कोकल्ल प्रथम कलचुरि भी शामिल थे।[52]

जेजाकभुक्ति के प्रारम्भिक चन्देल– वाक्पति के उत्तराधिकारी क्रमशः उसके दो पुत्र जयशक्ति और विजयशक्ति हुये।[53] जयशक्ति जिसे जेजा या जेजाक के नाम से जाना जाता है, पहले शासक हुआ।[54] उसके नाम चन्देल साम्राज्य को जेजाक भुक्ति के नाम से पुकारा गया।[55] रायचौधरी का मत है कि 'भुक्ति' शब्द का प्रयाग विभिन्न नामों के साथ गुप्तकाल से ही विद्यमान था।[56] जयशक्ति ने अपने पुत्री नट्टा का विवाह कलचुरि शासक कोकल्ल प्रथम से करके अपनी राजनैतिक स्थिति को सुदृढ़ कर लिया।[57] अगले शासक विजयशक्ति ने साम्राज्य का विस्तार दक्षिण में किया। विजयशक्ति के उत्तराधिकारी राहिल ने राहिल्य नामक नगर महोबा के निकट बसाया।[58] खजुराहो के दो अभिलेखों में राहिल का नाम आता है। राहिल ने सर्वप्रथम तालाबों एवं झीलों के निर्माण तथा मन्दिर निर्माण के जनकल्याणकारी कार्यो का सू.पात किया अजयगढ़ के मन्दिर में उसे नाम का प्रस्तर अभिलेख एवं महोबा में राहिल्य सागर इसके प्रमाण है।[59] राहिल के पुत्र एवं उत्तराधिकारी हर्ष (905–925 ए0डी0) ने साम्राज्य विस्तार के क्रम में कन्नौज पर चढ़ाई की तथा

केन्द्र बनाकर इन्होंने दृढ़ता प्राप्त करना प्रारम्भ किया था।[36] कछवाह राजाओं में सूरसेन, तेजकर्ण, लक्षमण, वज्रदामा, मंगलराज, कीर्तिराज, भुवनपाल, पद्मपाल, महिपाल, त्रिभुवन पाल, विजयपाल, सूरपाल और अनंगपाल शासक हुये।[37] तेजकर्ण के शासन में परिहारों ने इनका दमन किया, जबकि कीर्तिराज ने मालवा के राजा को परास्त किया। यद्यपि कछवाहा वैष्णव थे, किन्तु इनके समय में जैन धर्म को भी बढ़ावा मिला। ग्वालियर किले का सास–बहू मन्दिर कछवाहा शिल्प है। त्रिभुवनपाल (उपनाम–मनोरथ) ने संवत 1161 में महादेव का मन्दिर बनवाया। इनकुण्ड के जैन मन्दिरों में कछवाहों के शिलालेख मिलते हैं। कछवाहों की एक शाखा इनकुण्ड में अन्तिम दिनों में शासन करती रही।[38]

सातवीं सदी में बुन्देलखण्ड की पूर्वी सीमा में सेंगरों का राज्य स्थापित हुआ, जिसका बड़ा भाग बघेलखण्ड में था। इन्होंने अपने राज्य की पश्चिमी सीमा का विस्तार कालिंजर तक कर लिया था और अपने शासित प्रदेश को 'डहार' प्रदेश कहते थे, क्योंकि सम्भवतः इस राज्य का संस्थापक डहार देव था, जिसे सारंग देव भी कहते थे। सेंगरों ने कई पीढ़ी शासन किया, जिनमें वीर बहादुर सिंह अन्तिम शासक हुआ।[39] सेंगर सत्ता को कलचुरियों ने नष्ट किया। अपने शासित मैदानी एवं वन प्रान्त को ये लोग क्रमशः दनवार और वनवाद कहकर पुकारते थे।

गुप्त वंश एवं वर्धन वंश के शासन काल में बुन्देलखण्ड की दक्षिणी पेटी और मध्य बुन्देलखण्ड में पड़िहारों का शासन रहा है। परिहार हर्षवर्धन के मांडलिक थे। इन्होंने सिंगोरगढ़ का प्रसिद्ध दुर्ग बनवाया। इन्होंने मऊ–सहानियां तथा उच्छकल्प (उचेहरा) में भी अपने ठिकाने बनाये।[40] इसके अतिरिक्त धसान तट पर पचेर में भी इनका एक ठिकाना था। परिहारों की विस्तृत वंशावली उपलब्ध नहीं है, किन्तु ये वीर एवं दृढ़ निश्चयी राजपूत रहे हैं।

कलचुरि सत्ता– बुन्देलखण्ड में चन्देल सत्ता की स्थापना के पूर्व कलचुरियों की शक्ति बुन्देलखण्ड में स्थापित हुयी। कलचुरि सत्ता का विस्तार 249 ए0डी0 के पश्चात् नर्मदा नदी के उत्तर में प्रारम्भ हुआ था। कलचुरि राजाओं की लगातार वंशावली कोकल्लदेव प्रथम के समय से प्राप्त होती है। कलचुरि शासकों के शिलालेख बिलहरी, वाराणसी, देवगढ़, ग्वालियर तथा महेवा से प्राप्त होते हैं।[41] कोकल्लदेव के पश्चात मुग्धतुंग, बालहर्ष, कयूरवर्ष, युवराज, लक्ष्मण देव, शंकरगण, कोकल्लदेव द्वितीय, गांगेय देव, कर्णदेव इत्यादि महत्वपूर्ण शासक हुये। कलचुरि सत्ता ने बुन्देलखण्ड में अपना राजनैतिक एवं सांस्कृतिक प्रभाव छोड़ा। तेवर के निकट गोलकी मठ कलचुरि शिल्प का जीवंत प्रमाण है। गांगंयदेव कलचुरि ने अपने नाम से स्वर्ण, रजत एवं ताम्र सिक्के जारी किये। तेवर में उत्खनन से प्राप्त सिक्के इस तथ्य की पुष्टि करते हैं। गांगेयदेव के पुत्र कर्ण ने कलचुरि शक्ति को भारत की केन्द्रीय शक्ति बनाया। स्थानीय कहावतों में कर्ण देव को 'कर्ण डहरिया' या 'डाहल का कण' कहा जाता है।[42] के0पी0 जायसवाल ने कर्णदेव को भारतीय नेपोलियन की संज्ञा दी है।[43] कर्णदेव ने कर्णावती नाम नगर बसाया था। जबलपुर के निकट कुम्हीं नाम स्थान से प्राप्त ताम्रलेख से इसकी पुष्टि होती है। इस नगर

हैसियत से खोई में रहे तथा बाद में स्वतंत्र रूप से नागौद के पास अपना ठिकाना बनाया। ये जाति से क्षत्रिय थे और इस वंश में ओध देव, कुमार देव, जय स्वामी, व्याघ्र देव, जयनाथ और सर्वनाथ शासक हुये। परिव्राजक राज्य की स्थापना वर्मगिरि नामक सन्यासी ने की थी। इस वंश में सुशर्मन देवाय, प्रभंजन, दामोदर, हस्तिन और संक्षोभ आदि शासक हुये। गौर और ब्राम्हण भक्त परिव्राजकों ने अपना ठिकाना उचेहरा में बनाया। खड़परिका स्वातंत्रय प्रिय जाति थी, जिसका उल्लेख समुद्रगुप्त की हरिषेणकृत प्रयोग प्रशस्ति में हुआ है। कुछ समय के लिये झांसी और ग्वालियर के मध्य आभीरों ने अपनी स्वतंत्र सत्ता बना ली, जबकि दांगियों ने गढ़पहरा को राजधानी बनाकर कुछ समय शासन किया। बेतवा तथा धसान के मध्य दक्षिणी भाग पर डांग (ऊबड़–खाबड़ भूमि) में मूलतः पशुचारण करने वाली इस जाति के शासन के कारण ही इस क्षेत्र को दांग कहा जाता है। डा0 के0 पी0 जायसवाल ने छठी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में बेतवा और धसान के मध्य मांदेलों की प्रभावशाली सत्ता की चर्चा अपने अन्धकारयुगीन भारत में की है। निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि इस कालखण्ड में गुप्त राजाओं द्वारा कलात्मक मूर्तियों एवं मन्दिरों की रचना, वाकाटकों द्वारा सूर्य एवं शिव मन्दिरों की रचना तथा नाग राजाओं के शिव मन्दिर के निर्माणों द्वारा बुन्देलखण्ड को कला, धर्म और संस्कृति की अच्छी प्रगति प्राप्त हुयी।[34]

थानेश्वर तथा कन्नौज के शासक हर्षवधन ने सम्पूर्ण उत्तर भारत में अपना प्रभुत्व स्थापित किया था। सोलह वर्ष की आयु सम्वत 647 में राजगद्दी पर बैठे हर्षवर्धन के राज्य में स्वाभाविक रूप से सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड शामिल था। चीनी यात्री ह्वेनसांग इसी समय भारत आया था तथा उसने इस प्रदेश की यात्रा की थी। उसने इसका नाम 'चीचूटू' लिखा और यहां ब्राम्हण राज्य बताया। सम्भव है कि यह मातृ विष्णु और धान्य विष्णु के वंशजों का समय रह हो। कुछ विद्वानों का मानना है कि क्षेत्र का नाम जुझौति इसी कालखण्ड में पड़ा। इसी प्रकार इस समय राजधानी खजुराहों थी या एरण, इस विषय में श्री गोरेलाल तिवारी[35] तथा डा0 काशीप्रसाद त्रिपाठी में मतभेद है। इस काल में इस क्षेत्र में कलचुरियों, चन्देलों तथा गोंड राजाओं की सत्ता की जड़ें जमने लगी, साथ कछवाह, सेंगर, परिहारों का भी अभ्युदय हुआ।

इस कालखण्ड के प्रारम्भ के वर्षो में बुन्देलखण्ड में राजपूतों के छिट–पुट शासन होने के संकेत मिलते हैं, किन्तु क्रमागत रूप से ये दृढ़ होते गये तथा बाद के वर्षो में यहां कलचुरियों और चन्देलों के शक्तिशाली राज्य स्थापित हुये। यह उल्लेखनीय है कि इस क्षेत्र का यद्यपि आंशिक रूप से दशार्ण, डांग, महाकान्तार आदि नामो ंसे पुकारा गया, तथापि अभी भी इसका प्रचलित नाम चेदि प्रदेश ही रहा।

बुन्देलखण्ड में कछवाहों का उदय कब हुआ, निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है। राजा सूरसेन जिसने बाद में अपना नाम सूरजपाल रख लिया था, ने ग्वालियर का किला सम्वत 332 में बनवाया, ऐसी जनश्रुति है। छठवीं सदी के उत्तरार्द्ध में बुन्देलखण्ड के पश्चिम भाग में नरवर और कुन्तलपुरी (कुटवार) को

नागाबन्ध (नागौद) से बंगर, भूत नन्दी, शिशु नन्दी एवं यश नन्दी (4 ए0डी0 से 30 ए0डी0 तक) नरवर एवं पद्मावती से भीम नाग, खर्जुर नाग, वस्त, स्कन्ध नाग, बृहस्पति नाग, गणपति नाग, व्याघ्र नाग, वसु नाग एवं देव नाग (4 ए0डी0 से 220 ए0डी0) ने शासन किया चलाया।[28] ने अपने पड़ोसी गुप्त, वाकाटकों से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित कर अपनी स्थिति सुदृढ़ कर ली थी। इलाहाबाद की प्रयाग पशस्ति से पता चलता है कि समद्रगुप्त ने नागों को पराजित किया था, किन्तु निस्संदेह इनके स्थापत्य तथा इनकी संस्कृति ने इस क्षेत्र में नवीन चेतना का संचार किया।

वाकाटक ब्राम्हण थे, जो बुन्देलखण्ड में 300 से 520 ए0डी0 के मध्य रहे। इनका शासित क्षेत्र पश्चिमी बुन्देलखण्ड था तथा मूल ठिकाना बाघार (टीकमगढ़) में रहा। इस बंश में प्रभावशाली शासक भीमसेन था, जिसने विन्ध्यशक्ति की उपाधि धारण की थी। भीमसेन ने पूर्वी बुन्देलखण्ड तक अपना प्रभाव स्थापित किया। इस वंश में क्रमशः प्रवरसेन, रूद्रसेन, पृथ्वीसेन, प्रवरसेन द्वितीय, नरेन्द्र सेन, पृथ्वीसेन द्वितीय तथा हरिसेन शासक हुये।[29] मड़खेरा तथा उमरगढ़ के मन्दिर तथा नारायणपुर, गोरा के मन्दिर भी इस काल के शिल्प के उदाहरण हैं। वाकाटकों के वैवाहिक सम्बन्ध नागों तथा गुप्तों से भी रहे। मूल रूप से इनका शासित क्षेत्र बेतवा तथा धसान के मध्य ही रहा।

400 ए0डी0 तक सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड गुप्त राजाओं के प्रभाव में रहा, जिसमें दक्षिणी तथा पश्चिमी क्षेत्र उनके सीधे शासन में था, जिसका मुख्यालय एरण था। गुप्त राजाओं ने नागों, वाकाटकों तथा आभीर (झाँसी तथा ग्वालियर के मध्य) को अपने अधीन कर या सम्बन्ध स्थापित कर बुन्देलखण्ड में अपनी प्रभुसत्ता उदयगिरि, गढ़वां तथा सांची के शिलालेखों से प्राप्त होते हैं। हटा तहसील के सकौर ग्राम से प्राप्त 24 स्वर्ण सिक्कों में चन्द्रगुप्त, समुद्रगुप्त और स्कन्द्रगुप्त के नाम मिलते हैं।[30] ने दशावतार मूर्तियों वाले मन्दिरों का निर्माण बुन्देलखण्ड में कराया, जिसका श्रेष्ठतम उदाहरण देवगढ़ के शेषशायी विष्णु की उद्भुत मूर्ति है। यद्यपि स्कन्दगुप्त 'क्रमादित्य' ने हूणों को हराया था किन्तु बाद में हूण राजा तोरमाण ने बुन्देलखण्ड में प्रवेश पा लिया।[31]

तोरमाण ने अपने सम्बन्धी बुधगुप्त को इस क्षेत्र का भार सौंपा था, जिसने सुरश्मिचन्द्र नामक मांडलिक यहां नियुक्त किया था। सुरश्मिचन्द्र ने मैत्रायणी शाखा के दो ब्राम्हणों मातृ विष्णु व धान्य विष्णु की नियुक्ति एरण में की।[32] एरण इस समय अपने पूर्ण वैभव पर था। यहां स्थित 38 फुट ऊंचा स्तम्भ, लेखयुक्त वाराह मूर्ति व वाराह अवतार मंदिर तथा अन्य मंदिर एवं लेख एरण में हूण राज्य की गाथा कहते हैं। एरण के सतीचौरा लेख से ज्ञात होता है कि सरभराज का दामाद गोपराज यहां आया था, जिसकी मृत्यु पर उसकी पत्नी सती हो थी। तोरमाण के बाद मिहिरकुल का नाम हूण राजाओं में प्राप्त होता है।[33]

इस कालखण्ड में बुन्देलखण्ड में अनय छोटे राज वंशों के अस्तित्व का भी पता चलता है जिनमें उच्छकल्प, परिव्राजक, परिहार, खड़परिका, दांगी, अहीरवाड़ा तथा मांदले की चर्चा की जा सकती है। उच्छकल्प गुप्तों, वाकाटकों के सामन्त की

त्रिपुरासुर त्रिपुर (तेवर, जबलपुर) के उदाहरणों से वे अपने कथन को प्रमाणित करते हैं।

महाजनपद काल (600 ई0पू0) में सोलह महाजनपदों में से एक चेदि इस क्षेत्र में विस्तारित था, जिसकी चर्चा की जा चुकी है। चेदि की सीमा पश्चिम में मत्स्य महाजनपद तथा पूर्व में वत्स एवं काशी महाजनपदों से लगती थी।[18] चेतिय जातक में भी चेदि के महानगर सोत्रिवती का उल्लेख है जिसकी तुलना विद्वानों ने शुक्तिमती नगर से की है।[19] महाजनपद काल में इस क्षेत्र में अनेक मार्गो का विकास हुआ।

ईसा से लगभग सवा तीन सौ वर्ष पूर्व मौर्य शासन में मगध राज्य सर्वाधिक शक्तिशाली हो गया था।[20] उज्जैन में मौर्य साम्राज्य का प्रतिनिधि वायसराय बैठता था तथा उस समय बुन्देलखण्ड का अधिकांश भाग उसके अधीन था। बिन्दुसार के शासन में अशोक उज्जैन का नियन्ता नियुक्त था तथा इसी क्रम में उसने इस भूमि पर आधिपत्य रखा।[21] अशोक महान के समय के शिलालेख/अभिलेख नागौद, रूपनाथ, महोबा तथा गुजर्रा (दतिया) में मिले, जो बुन्देलखण्ड में उसके शासन के प्रमाण है।[22] मौर्य शासक बृहद्रथ को मार कर पुष्यमित्र शुंग ने 184 ई0पू0 में अधिकांश बुन्देलखण्ड को अपने शासन के अधीन कर लिया।

मौर्य वंश के पतन के पश्चात ब्राम्हण राजवंशों का प्रभाव बढ़ा, जिनमें शुंग, 78 ए.डी. तक रही। बुन्देलखण्ड में पुष्यमित्र शुंग का युवराज अग्निमित्र गवर्नर था, जिसने भेलसा (विदिशा) के निकट बेसनगर में अपनी राजधानी स्थापित की।[23] शुंगों की सत्ता लगभग 112 वर्ष रही,[24] जबकि कण्व वंश ने लगभग 45 वर्ष शासन किया। इन राजाओं का विवरण विष्णु पुराण, वायु पुराण तथा भागवत पुराण में उपलब्ध है। इस काल में भारत में राजतंत्र के अतिरिक्त गणतंत्रों के अस्तित्व के प्रमाण मिलते हैं, अतः बुन्देलखण्ड के इस क्षेत्र में भी दोनों प्रणालियों के प्रभाव मिलते हैं, परन्तु विशेष रूप से यहां राजसत्तात्मक तंत्र ही अधिक रहे। गणराज्यों में एराकण्या (एरन, सागर जिले की खुरई तहसील में) का उल्लेख समाचीन होगा, जहां से प्राप्त 17 सिक्के एरण गणराज्य के माने जाते हैं, किन्तु इसका विस्तार कहां तक रहा होगा, यह कहना कठिन है।[25]

शैव मतावलम्बी नाग क्षत्रिय राजसत्ता का आविर्भाव बुन्देलखण्ड में ब्राम्हण वंशीय राजाओं के पतन एवं कुषाणों के अभ्युदय के समय हुआ, यद्यपि कुछ इतिहासकार इन्हें बहुत पहले का मानते हैं[26] नागवंशी राजाओं ने पद्मावती (पद्म पवैया, ग्वालियर में), कान्तीपुरी (कुतवार, ग्वालियर), नरवर, नागौर विदिशा से अपना शासन सूत्र संभाला। यहां मिलने वाले अनेक सिक्कों से यह बात प्रमाणित हो चुकी है।[27] यह भी सम्भव है कि नागों के विभिन्न वंश अलग–अलग इन राजधानियों के शासक रहे। नाग स्थापत्य कला उत्कृष्ट थी। दो सर्पों के मध्य शिवलिंग इनका राज चिन्ह था। नागों का प्रसिद्ध मठ नचना कांचन (अजयगढ़) कला का अद्भुत आदर्श है। विष्णु पुराण में भी 09 नाग राजाओं की चर्चा है। विदिशा में शेषनाग, भोग नाग, रामचन्द्र नाग, धर्मवर्मन तथा बंगर ने (10 ई0पू0 से 4 ऐ0डी0 तक)

अभी भी प्राकृतिक वनस्पतियों की बहुतायत है। नदियों, नालों के किनारे तथा पर्वतीय ढालों में विशेष रूप से भूमि वनाच्छादित है।[8] वर्तमान में बुन्देलखण्ड के जिलों में सर्वाधिक वन भूमि दमोह, पन्ना, सागर के पास है, जहां क्रमशः लगभग 37, 34 एवं 29 प्रतिशत भूमि वनों के अन्तर्गत है।[9] कम वनाच्छादित भूमि वाले जिलों में हमीरपुर, जालौन एवं बांदा जिले आते हैं जहां क्रमशः लगभग 5, 6, 8 प्रतिशत भूमि ही वनों के लिये है।[10] शेष जिलों में 9 से 14 प्रतिशत भूमि वनाच्छादित कही जा सकती है। बुन्देलखण्ड के एक बड़े भू भाग में जो कि ऊबड–खाबड़ अथवा परती पड़ा हुआ है, छोटी झाड़ियां और घासें बहुतायत से देखी जाती हैं। इन स्थलों में छोटे जंगली जानवरों एवं विभिन्न प्रकार के पक्षियों का आवास रहता है। प्राचीन भारतीय इतिहास के समझने में भारत के दो प्रसिद्ध महाकाव्य रामायण और महाभारत बहुत सहायक हैं।[11] रामायण में बुन्देलखण्ड के कुछ स्थानों और निवासियों की चर्चा राम बनवास के प्रसंग में उपलब्ध है। राम क्रमशः गंगा तथा यमुना को पार कर दक्षिण में प्रथमतः चित्रकूट में दीर्घ काल तक रहे, जो वर्तमान बुन्देलखण्ड के पूर्वी भाग में स्थित है।[12] रामायण में वर्णित चित्रकूट आश्रम अत्रि एवं सरभंग के आश्रम आदि के विवरण से स्पष्ट है कि उस समय यह घना जंगल था, और तपस्वियों के आश्रमों के लिये उपयुक्त स्थल था। पूर्वी भाग में निवास करने वाली कोल जाति के प्रसंग रामायण में उल्लिखित हैं।[13] अन्य पौराणिक ग्रंथों में चर्चित स्थल जिसमें विभिन्न ऋषियों की चर्चा है, के स्थलों को जनश्रुतियों में वर्तमान में यहां से जोड़ा गया है, जसे ब्रम्हाजी की तपस्थली–बृहमान (बरमान) घाट, बृहस्पति की तपस्थली–बृहस्पति कुण्ड (पन्ना), वामदेव का आश्रम (बाँदा), कोंच ऋषि का आश्रम–कोंच, अगस्त्य ऋषि का आश्रम–कालिंजर आदि।

महाभारत काल तक बुन्देली भूमि विकसित हो चुकी थी और लम्बे काल खण्डों में कई राज्यों में विभक्त, एवं अनेकों शासकों से शासित हुयी। इस समय तक इस क्षेत्र को चेदि राज्य के नाम से जाना जाने लगा था। पुरूरूवा के वंशजों में यदु तथा इसी वंश में केशिक नामक राजा हुआ, जिसने चेदि राज्य एवं वंश की स्थापना की। चेदि राज्य प्रारम्भ में चर्ण्यवती (चम्बल) और कर्णवती (केन) के मध्य स्थित माना गया है।[14] चेदियों में प्रसिद्ध शिशुपाल महाभारत युद्ध के के समय यहां शासक था।[15] उस समय यहां शुक्तिमती तट पर शुक्तिमती नगर, यमुना के दक्षिण तट पर शाहगति आदि चेदि राज्य के बड़े नगर थे, जिनकी पहचान विवादास्पद है,[16] तथापि बेतवा के पश्चिम में स्थित चन्देरी को निर्विवाद शिशुपाल की राजधानी माना जा रहा है। इसी कालखण्ड में दशार्ण राज्य की भी चर्चा है, जहां हिरण्यवर्मा राज्य करता था। दशार्ण (धसान) नदी के पूर्व के क्षेत्र को दशार्ण राज्य की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। महाभारत युद्ध में दशार्ण नरेश सुधर्मा ने भाग लिया था। यदि और दशार्ण दोनों ही एक सत्तात्मक राज्य थे अतः राज्य संस्था एवं राज्य प्रबन्ध अन्य तत्कालीन राज्यों समान ही रहा होगा।[17] चूंकि महाभारत काल तक यहां के राजाओं का प्रायः आर्यवंशी राजाओं से युद्ध हुआ करते थे, अतः कुछ इतिहासकारों का मानना है कि प्रारम्भ में क्षेत्र में अनार्य शासक ही हुये हैं। शिशुपाल (चन्देरी), दन्तवक्र (दतिया), बाणासुर (बानपुर), हिरणकश्यप (एरच) एवं

ISSN-2394-6326
Journal de Brahmavart

कालिंजरपुरवराधीश्वर एवं कालिंजराधिपति

डा0 पुरुषोत्तम सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग
विक्रमाजीत सिंह सनातन धर्म कॉलेज,कानपुर

बुन्देलखण्ड का दक्षिणी भू भाग ऊंचे पठारों, पर्वत श्रृंखलाओं, बिखड़ी पहाड़ियों एवं नदी नालों युक्त ऊंचा विखण्डित भू–भाग है तो दूसरी ओर इसका उत्तरी भाग सततवाही नदियों के निक्षेपों से संवारा गया नवीन कांप मिट्टी का समतल उपजाऊ मैदान है। दक्षिण का पहाड़ी, पठारी भाग जंगलों से युक्त और दुर्गम रहा है तो उत्तर का मैदान माननीय आवास के लिये सदैव आमंत्रण देता रहा है।[1] बुन्देलखण्ड का दक्षिणी भाग उच्च पठारी भाग है जिसका ढाल उत्तर की ओर है और जिसमें श्रेणियों के साथ बिखरी हुयी पहाड़ियां भी मौजूद हैं। इसे मध्यवर्ती संक्रमण भूमि से लगभग 250 मीटर की समोच्च रेखा से अलग किया जा सकता है तथा सागर तल से इसकी औसत ऊंचाई 300 से 350 मीटर के मध्य मिलती है।[2] यह धरातलीय स्वरूप बुन्देलखण्ड के लगभग 65 प्रतिषत हिस्से में फैला है, जहां 600 मीटर ऊंची श्रेणियां भी देखने को मिलती हैं। विन्ध्याचल श्रेणी दतिया की स्योंढ़ा तहसील से प्रारम्भ होकर दक्षिण श्रेणियों के रूप में रेखांकित होती है। इन श्रेणियों को सागर और रहली में भी देखा जा सकता है जबकि दमोह जिले में इन्हें भाण्डेर श्रेणियों के रूप में पहचाना जाता है। दक्षिण पूर्व में कैमूर पहाड़ियों की स्थिति महत्वूपर्ण है। नदी नालों के कटाव से प्रभावित यह भू भाग उत्तर की ओर एक ढाल अथवा कगार के रूप में समाप्त होता है। धौरा, नरहट और मदनपुर के पास इसमें विलक्षण दर्रे देखे जा सकते हैं, तो देवगढ़ जैसे गॉर्ज और अनेक जलप्रपातों की उपस्थिति इस भू–भाग में दर्शनीय है। कटाव और अनाच्छादन की प्रक्रिया ने इस ऊंचे भू भाग विशेषकर पन्ना अजयगढ़ श्रेणियों के क्षेत्र को एक अलग स्वरूप प्रदान कर दिया है।[3]

बुन्देलखण्ड में 200 फुट से अधिक ऊंची पहाड़ियों में प्रमुख नाम अमझनेरा, मदनपुर, नारहट, लखनझिर, कलुमार (कैमूर में), नाहरमऊ हैं।[4] इसके अलावा कालिंजर, सेहुन्डा, मड़फा, बछेहर, कटेरा, भसनेह, सैलवाडद्व पंचमनगर, हरजुवा, रोया, मचरार, पन्नाघाटी, मदार टूंगा, मोहदरा, नैनगिरि, अजयगढ़, देवपहाड़, रंजीता पहाड़ी, विजावर घाटी, चन्दलख, किशनगढ़, मनियागढ़, फाटा, लौडी पहाड़ियों का भी महत्वूपण्र स्थान है।[5] बुन्देलखण्ड का दक्षिणी भू भाग एक लम्बे कालखण्ड में दुर्ग निर्माण और अधिवास को प्रभावित करता रहा है।[6]

प्राचीन काल में निश्चित रूप से यह क्षेत्र वन सम्पदा में धनी था, किन्तु शनैः शनैः कृषि आवश्यकताओं ने समतल स्थानों को वृक्ष विहीन कर दिया। बुन्देलखण्ड में मॉनसूनी और अर्द्धशुष्क जलवायु की वनस्पति अधिकाशतः देखने को मिलती है। उत्तर का मैदानी भाग प्रायः वन विहीन है।[7] तथा यत्र तत्र अथवा नदी की डांगों में ही ये प्राकृतिक वन देखने को मिलते हैं। मध्यवर्ती एवं दक्षिणी पहाड़ी हिस्सों में